Vol.9 October 2015 No.3
Annual Subscription : Rs 100
Rs. 10/- per copy

ब्रह्मार्पण
BRAHMARPAN

वेदोऽखिलो धर्ममूलम्

A Monthly publication of Brahmasha India Vedic Research Foundation

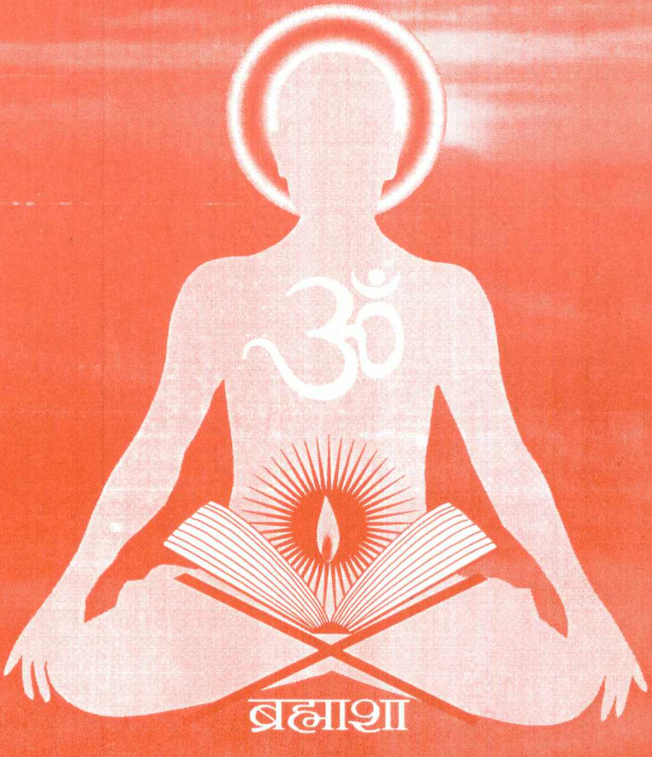

Brahmasha India Vedic Research Foundation
ब्रह्माशा इंडिया वैदिक रिसर्च फाउन्डेशन

आर्यावर्त्त का वह कर्णधार
लालबहादुर शास्त्री
(2 अक्तूबर को जन्म-दिवस पर विशेष)

–प्रियवीर हेमाइना

सादा जीवन उच्च विचार
था जिनके जीवन का सार,
वे लालबहादुर शास्त्री जी
थे प्रधानमंत्री अति उदार।

पैदा हुए थे कुटी में वे
था साहस, उद्यम, सदाचार,
इसीलिए तो जीवनभर ही
कुटी-मनुज को था किया प्यार।

वेद शास्त्र की शिक्षाओं को
हर पल किया था अंगीकार,
यही कामना रही हृदय में
परिवार बनें-आर्य परिवार।

थे हुए हौंसले पस्त, शत्रु के
मानी थी अपनी बुरी हार,
'ताशकन्द समझौता' करके
रोका था वहाँ नर-संहार

'जय जवान जय-जय किसान' का
वह मंत्रदाता वह कलाकार,
'विजयघाट' में सो रहा जयी
आर्यावर्त का वह कर्णधार

318, विपिन गार्डन,
उत्तम नगर, नई दिल्ली-10059

BRAHMASHA INDIA VEDIC RESEARCH FOUNDATION

C2A/58, Janakpuri,
New Delhi-110058
Tel :- 25525128, 9313749812
*email:*deeukhal@yahoo.co.uk
brahmasha@gmail.com
Website : www.thearyasamaj.org
of Delhi Arya Pratinidhi Sabha

Sh. B.D. Ukhul
Secretary
Dr. B.B. Vidyalankar 47566889
President
Col.(Dr.) Dalmir Singh (Retd.)
V.President
Dr. Mahendra Gupta *V.President*
Ms. Deepti Malhotra
Treasurer

Editorial Board

Dr. Bharat Bhushan Vidyalankar,
Editor
Dr. Harish Chandra
Dr. Mahendra Gupta
Acharya Gyaneshwararya

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्याय क्षेत्र दिल्ली ही होगा।

Printed & Published by
B.D. Ukhul for Brahmasha India Vedic Research Foundation
Under D.C.P.
License No. F2 (B-39) Press/ 2007
R.N.I. Reg. No. DELBIL/ 2007/22062

Price : Rs. 10.00 per copy
Annual Subscription : Rs. 100.00

Brahmarpan October 2015 Vol. 9 No.3
आश्विन–मार्गशीष 2072 वि.संवत्

ब्रह्मार्पण
BRAHMARPAN

A bilingual Publication of Brahmasha India Vedic Research Foundation

CONTENTS

1. आर्यावर्त्त का वह कर्णधार लालबहादुर शास्त्री 2
(2 अक्तूबर को जन्म-दिवस पर)
–प्रियवीर हेमाइना
2. संपादकीय 4
3. सांख्य दर्शन 7
–डॉ. भारत भूषण
4. दण्डी गुरु विरजानन्द 8
–डॉ. अशोक आर्य
5. गणितज्ञ आर्य भट्ट 10
6. क्या महात्मा गाँधी सहिष्णु थे? 12
–डॉ. विवेक आर्य
7. लालबहादुर शास्त्री 17
(2 अक्टूबर पर विशेष)
– डॉ. श्याम सिंह 'शशि'
8. अपनी मुक्ति की चिन्ता क्यों करूँ? 18
–शिवकुमार गोयल
9. कागज़ी रावण जलाने मात्र से सीताओं के सम्मान की रक्षा नहीं होगी 19
–लक्ष्मीकांता चावला
10. दीपावली पर स्वयं बुझकर एक नया दीप जला गए 24
–डॉ. रामभक्त लांगायन (आई. ए. एस)
11. दो आर्य विद्वानों के संस्मरण 30
–श्री त. शि. क. कण्णन
11. Original Home of the Aryans 33
-N.K. Chowdhary

संपादकीय

कुछ दिन पूर्व 'ऑल इंडिया मुस्लिम मजलिस-ए-मशवरात' के स्वर्ण जयन्ती समारोह को संबोधित करते हुए भारत के उपराष्ट्रपति हामिद अंसारी ने केंद्र सरकार से कहा कि वह मुस्लिम समुदाय के प्रति भेदभाव पूर्ण नीति छोड़ दे। उन्होंने आगे कहा कि मुसलमान आज भी वंचित है, उनके सामने पहचान और सुरक्षा का संकट है। एक संवैधानिक पद पर आसीन उच्च पदाधिकारी को ऐसा सांप्रदायिक बयान नहीं देना चाहिए। यह बयान पद की गरिमा के विपरीत है। यह बयान ऐसा है जैसे कि वे सम्प्रदाय विशेष के नेता हों। श्री हामिद अंसारी के इस मुस्लिम परस्त बयान से देश में विवाद खड़ा हो गया है। क्या वास्तव में भारत में मुसलमानों से भेदभाव होता है? प्रशासनिक व्यवस्था में राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति जैसे सर्वोच्च पदों पर डॉ. जाकिर हुसैन, श्री फखरुद्दीन अली अहमद, डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम और स्वयं हामिद अंसारी आसीन हो चुके हैं। यदि हमारा संविधान भेदभाव पूर्ण होता तो ये पद मुस्लिम समुदाय के नेताओं को कदापि नहीं दिए जाते।

अब जरा देश के विभाजन की पृष्ठभूमि पर नजर डालें तो विभाजन से पूर्व अखंड भारत में मुसलमान नेताओं ने कहा कि हम हिन्दुओं के साथ मिलकर नहीं रह सकते अतः वे प्रदेश जहाँ मुसलमानों की आबादी अधिक है उसे अलग कर हमें पाकिस्तान दे दिया जाए। विभाजन के परिणामस्वरूप उन्हें उनका हिस्सा मिल गया। शेष बचा भारत जो हिन्दू-सिख, बौद्ध, जैन, ईसाई, पारसी सभी का मिला-जुला देश है।

विभाजन के बाद मुसलमानों का हक नहीं रहा

ध्यान रहे उस अखंड भारत की परिसंपत्तियों का संवैधानिक बँटवारा समानुपातिक जन प्रतिनिधित्व कानून के तहत कर दिया गया। तत्कालीन सकल मुस्लिम आबादी का नब्बे प्रतिशत पाकिस्तान के पक्ष में था। हमारी रक्षा सेना और सैनिक साजो-सामान और हिन्दू-मुस्लिम बटालियनें भी इसी आधार पर बाँटे गए।

आजादी से पहले निर्णायक मत विभाजन में हमारी संसद की पूर्ववर्ती 102 सदस्यीय केन्द्रीय असेम्बली के 30 के 30 सुरक्षित मुस्लिम क्षेत्रों से अखंड भारत के मुस्लिम वोट बैंक ने अपनी कानूनी स्वतंत्रता का उपयोग करके राष्ट्रवादी मुस्लिमों को हराकर मुस्लिमलीगी प्रत्याशियों को अपने 90 प्रतिशत के प्रचंड बहुमत से जिता दिया। उधर राष्ट्रवादी कांग्रेसी मुस्लिम प्रत्याशियों की जमानतें जब्त हो गईं। मौ. अबुल कलाम आजाद और रफी अहमद किदवई जैसे कांग्रेसी नेता हिन्दू बहुल प्रदेशों से हिन्दू वोटों के कारण जीत सके। स्पष्ट ही पाकिस्तान का निर्माण तत्कालीन जनसंख्या के 90 प्रतिशत अखंडता विरोधी सर्वमत से हुआ।

कुछ देशभक्त मुसलमान भी थे

निस्सन्देह अशफाक़ उल्लाह जैसे देशभक्त मुसलमानों का भी स्वतंत्रता आंदोलन में महत्वपूर्ण योगदान था। परन्तु इनकी संख्या बहुत कम थी। पाकिस्तान बन जाने पर बड़ी संख्या में मुसलमान पाकिस्तान चले गए और पाकिस्तान में हिन्दुओं की मारकाट शुरू हो जाने से करोड़ों हिन्दू भारत आ गए। बहुत बड़ी संख्या में हिन्दू मारे भी गए। बाद में वहाँ बचे 15 प्रतिशत हिन्दुओं में से 12.5: का या तो धर्म-परिवर्तन कर दिया गया या उन्हें मार दिया गया। इसके विपरीत विभाजन के समय भारत से पाकिस्तान गए बहुत से मुसलमान बाद में भारत लौट आए उन्हें यहाँ बसा लिया गया।

पाकिस्तान बनने के बाद आरंभ में मुसलमान शान्त रहे परंतु धीरे-धीरे उन्होंने फिर वही पुरानी माँगे उठानी शुरू कर दीं। वे देश की मुख्यधारा में मिलने के बजाय अपनी अलग पहचान बनाने में लगे हैं। अब वे पिछड़े और गरीब मुसलमानों के लिए आरक्षण की माँग करने लगे हैं। जिसकी संविधान में व्यवस्था नहीं है। हिन्दुओं में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जन-जातियों के लिए जाति के आधार पर संविधान में आरक्षण का प्रावधान है। ऐसी व्यवस्था ईसाइयों या मुसलमानों के लिए इसलिए नहीं है क्योंकि वे अपने धर्म में किसी प्रकार की ऊँच-नीच और भेदभाव को नहीं मानते। इसी कारण वे निम्नवर्ग के हिन्दुओं को समानता का

लालच देकर धर्मान्तरित कर लेते थे। इन धर्मों में अधिकांश लोग हिन्दुओं से धर्मान्तरित ही हैं।

यदि मुसलमान भारत की मुख्यधारा में शामिल होना चाहते हैं तो उन्हें देश में सभी के लिए समान नागरिक संहिता को अपना कर मुस्लिम पर्सनल लॉ को भूल जाना होगा। शिक्षा के क्षेत्र में मदरसों के बजाय सामान्य स्कूलों में राष्ट्रीय शिक्षा दिलानी चाहिए। 'वन्देमातरम्' राष्ट्रगान गाने से परहेज नहीं करना चाहिए।

देश में जनसंख्या को नियंत्रित करने के लिए 'हम दो हमारे दो' 'छोटा परिवार सुखी परिवार' जैसे नारों को मुसलमानों के सिवाय सभी ने स्वीकार किया। मुसलमानों में चार-चार विवाह के कारण बच्चे भी ज्यादा होते हैं, इसलिए उनकी आबादी निरन्तर बढ़ रही है। इसी का यह परिणाम है कि 2001 की तुलना में 2011 की जाति/धर्म पर आधारित जनगणना में मुस्लिम आबादी में 17.5 प्रतिशत वृद्धि हुई जबकि हिन्दुओं की आबादी जो 2001 में 80.45 प्रतिशत भी वह घटकर 79.8 रह गई। असम के 27 जिलों में से 9 जिलों में मुस्लिम बहुमत में है वहीं पश्चिम बंगाल के कई जिलों में मुस्लिम आबादी 50 प्रतिशत से बढ़कर 74 प्रतिशत हो गई है। उधर बिहार में जहाँ मुसलमानों की आबादी एक करोड़ 37 लाख थी वह बढ़ कर पौने दो करोड़ हो गई है। इतनी तेजी से मुसलमानों की जनसंख्या में वृद्धि अच्छा लक्षण नहीं है। इससे कुछ समय बाद एक और पाकिस्तान की माँग उठ सकती है। इस लिए हमें सावधान रहना चाहिए।

माननीय उपराष्ट्रपति ने मुसलमानों के साथ भेदभाव और अपनी पहचान बनाए रखने तथा सुरक्षा के संकट की बात कही, वह उनकी अपनी बनाई है। 'सबका विकास सबका साथ' में सभी वर्ग शामिल हैं। किसी से भेदभाव का प्रश्न ही नहीं उठता। यदि अब भी ऐसी माँग उठती रही तो दोनों संप्रदायों में दूरी अधिक बढ़ जाएगी जो देश के भविष्य के लिए उचित नहीं है।

संपादक

सांख्य दर्शन (अध्याय-1, सूत्र-93)

-डॉ. भारत भूषण विद्यालंकार

सत्व आदि तत्वों के प्रीति आदि स्वरूप तथा 'आद्य' पद से लघुत्व आदि धर्मों का निर्देश करने के बाद सूत्रकार उन्हीं धर्मों के आधार पर गुणों का स्पष्ट रूप में साधर्म्य बतलाते हैं।

लघ्वादिधर्मैः साधर्म्यंवैधर्म्यं च गुणानाम् ।।93।।

अर्थ-(लघ्वादिधर्मैः) लघु आदि धर्मों के द्वारा (गुणानां) गुणों का (साधर्म्यं) साधर्म्यं (वैधर्म्यं च) और वैधर्म्य है।

भावार्थ- सभी सत्व, लघुत्व आदि धर्मों से युक्त होने के कारण एक समान है। इसलिए लघुत्व आदि धर्म, उनके साधर्म्य हैं और रजस्, तमस् के वैधर्म्य। इसी प्रकार चलत्व (क्रियाशीलता) आदि रजस् तत्वों के साधर्म्य और सत्व, तमस् के वैधर्म्य हैं तथा गुरुत्व आदि सभी तमस् तत्व के साधर्म्य और सत्व, तमस् के वैधर्म्य हैं। सत्व, रजस् के वैधर्म्य हैं। कपिल मुनि ने इस सूत्र द्वारा यह स्पष्ट कर दिया है कि प्रकृति एक व्यक्तिरूप तत्व नहीं है। सत्व, रजस्, तमस् का नाम प्रकृति है - (सत्वरजस्तमसांसाम्यावस्था प्रकृतिः)। उनमें प्रत्येक तत्व अनन्त रूपों वाला है, इसलिए उनमें साधर्म्य का कथन संगत हो सकता है। यदि सत्व एक व्यक्ति रूप हो तो वहाँ साधर्म्य का प्रश्न ही नहीं उठता।

सी-2ए, 16/90 जनकपुरी,
नई दिल्ली-10058

दण्डी गुरु विरजानन्द

–डॉ. अशोक आर्य

महर्षि दयानन्द सरस्वती को महर्षि बनाने वाले, इतिहास में स्वर्णाक्षरों में स्थान पाने वाले दण्डी गुरु विरजानन्द जी का जन्म 1837 वि. तदनुसार 1778 ई. को पंजाब के करतारपुर के समीप गंगापुर गाँव में सारस्वत ब्राह्मण पं. नाारायण दत्त जी के यहाँ हुआ था। पाँच वर्ष की अवस्था में चेचक के कारण आँखों की ज्योति जाती रही। पिता ने घर पर ही संस्कृत की शिक्षा दी, किन्तु छोटी आयु में ही माता-पिता ने साथ छोड़ दिया। भाई व भावज के व्यवहार से तंग आकर गृह त्याग कर ऋषिकेश व फिर कनखल चले गए। यहाँ स्वामी पूर्णानन्द सरस्वती से संन्यास दीक्षा ले विरजानन्द नाम पाया।

कुछ समय कनखल निवास के पश्चात् वे काशी चले गए, जहाँ पं. विद्याधर जी से उच्चकोटि की शिक्षा प्राप्त की। यहाँ से गया जाकर अध्ययन व अध्यापन किया। यहाँ से क्रमशः कोलकाता, सोरों, गडियाघाट गए। यहाँ एक दिन मन्त्रपाठ करते स्वामी जी को अलवर नरेश ने देखा के वे उन्हें इस शर्त पर अलवर ले गए कि वे स्वामी जी से प्रतिदिन शिक्षा लेंगे तथा जिस दिन नहीं आएँगे, उस दिन स्वामीजी अलवर छोड़ सकते हैं। शीघ्र संस्कृत सिखाने के लिए स्वामी जी ने "शब्द बोध" पुस्तक की रचना की। एक दिन राग-रंग में मस्त अलवर नरेश गुरु जी के पास जाना भूल गए, बस स्वामीजी उसी दिन अलवर से प्रस्थान कर पुनः सोरों के गडियाघाट जा विराजे। यहाँ स्वामी जी को भयंकर रोग ने आ घेरा। स्वामीजी के शिष्य उन्हें अपनी सेवा के बल पर मौत के मुँह से वापिस लाये। अब स्वामीजी यहाँ से मुरसान, भरतपुर होते हुए मथुरा पहुँचे। यहाँ स्वामीजी ने पाठशाला खोली तथा नियमित शिक्षा दान करने लगे। पढ़ाने की उत्तम शैली के कारण शिक्षा के केन्द्र काशी से भी शिक्षार्थी स्वामी जी के पास आने लगे। स्वामीजी देश को स्वाधीन करा पुनः विश्व गुरु के रूप में देखना चाहते थे। वे जानते थे कि राजा

के सुधार से लोग स्वयं ही सुधर जाएँगे। यही कारण है कि आपने राजाओं की शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया। मथुरा में शास्त्रार्थ की चुनौती मिली, जिसे स्वीकार किया किन्तु यह शास्त्रार्थ कुटिलता की भेंट चढ़ गया।

स्वामीजी अष्टाध्यायी और महाभाष्य नामक आर्ष ग्रन्थों के अतिरिक्त अन्य ग्रन्थों को धूर्तों की कृति मानते थे। अतः स्वामीजी आर्ष ग्रन्थों के प्रचार व प्रसार में जुट गए। सन् 1857 के प्रथम स्वाधीनता संग्राम के आप जनक थे। इसमें भाग लेने वाले सभी राजा आपके शिष्य थे। यह योजना आपने अपने गुरु स्वामी पूर्णानन्द जी के आदेश से बनाई। इस योजना पर सभी शिष्य शासकों ने अमल किया। स्वामीजी एक सर्वधर्म सभा के माध्यम से भारत को एक संगठन में बाँधना चाहते थे किन्तु जयपुर के राजा रामसिंह के इसमें रुचि न लेने से ऐसा सम्भव नहीं हो सका। स्वामीजी की शिक्षा की प्रसिद्धि चतुर्दिक फैल रही थी, किन्तु स्वामीजी भारत के उद्धार के लिए आर्ष ग्रन्थों के प्रसारार्थ शिष्य खोज रहे थे, इन्हीं दिनों प्रभु आदेश से स्वामी दयानन्द सरस्वती आपको शिष्य के रूप में मिले।

1917 वि. तदनुसार 1860 ई. को महर्षि दयानन्द सरस्वती ने गुरु जी की इच्छानुसार आर्ष ग्रन्थों का अध्ययन किया। गुरु जी ने स्वामी दयानन्द को अपने सम विद्वान् बनाया तथा वैदिक प्रचार व स्वाधीनता आदि का बोझ अपने कन्धों से उतार दयानन्द के कन्धों पर डाला। इस प्रकार गुरु विरजानन्द को इस बात की खुशी थी कि जैसे शिष्य की आवश्यकता थी वह उनको अपने जीवन के अन्तिम क्षणों में मिल ही गया।

सम्वत् 1925 वि. आश्विन वदी त्रयोदशी, सोमवार तद्नुसार सितम्बर 1868 ई. को निश्चिंत हो वे इस संसार से विदा हुए। उनके देहावसान का समाचार सुन महर्षि दयानन्द सरस्वती के मुख से निकला "आज व्याकरण का सूर्य अस्त हो गया।" आपका जीवन आर्ष ग्रन्थों के प्रचार-प्रसार को समर्पित था। जब तक सृष्टि रहेगी आपका नाम सूर्य के समान चमकता रहेगा।

गणितज्ञ आर्यभट्ट

आर्यभट्ट का जन्म वि. सं. 533 अर्थात् 476 ईसवीं में हुआ था। यह समय भारत का सुवर्णयुग था। मगध शासक गुप्त साम्राज्य के निर्देशन में समग्र भारत बहुमुखी प्रगति में विश्व में सबसे अग्रणी था।

आर्यभट्ट का जन्मस्थान पटना अर्थात् प्राचीनकालीन मगध की राजधानी पाटलीपुत्र के समीप कुसुमपुर नामक ग्राम था। आर्यभट्ट सुप्रसिद्ध गणितज्ञ तथा प्रखर ज्योतिषी थे। खगोल विज्ञान पर भी आपका प्रभुत्व था।

आर्यभट्ट के सबसे प्रसिद्ध ग्रन्थ का नाम 'आर्यभट्टीय' है। इस ग्रन्थ की रचना आपने वि. सं. 556 (ई. सन् 499) में की। यह ग्रन्थ छन्दोबद्ध है और चार विभागों में विभक्त है। यह ग्रन्थ सूत्रशैली में है। किसी सिद्धान्त को अत्यन्त संक्षेप में प्रतिपादन करना सूत्रशैली कहलाती है। इसे हम "गागर से सागर" की उपमा देते हैं। उदाहरण के लिए एक ही श्लोक में गणित के पाँच नियमों का समावेश हो जाता है। 'आर्यभट्टीय' के चतुर्थ विभाग का नाम 'गोलपाद' है। उसमें केवल 11 ही श्लोक हैं। किन्तु उन 11 श्लोकों में सम्पूर्ण सूर्य सिद्धान्त को प्रतिपादित किया गया है।

आर्यभट्ट त्रिकोणमिति (Trigonometry) के भी आविष्कर्ता थे। आपने त्रिकोणमिति के अनेक सूत्रों का संशोधन किया। आपके ग्रन्थ आर्यभट्टीय' में प्रथम बार त्रिकोणमिति का उल्लेख मिलता है। आर्यभट्ट प्रथम व्यक्ति थे जिन्होंने गणित में पाई (π) का प्रयोग किया। आपने ही सर्वप्रथम सारणियों का प्रयोग किया। आपके द्वारा प्रतिपादित सूत्र और नियम वर्तमान मं गणित के पाठ्यक्रम में पढ़ाए जाते हैं।

आर्यभट्ट ने ही प्रथम बार दिखाया कि पृथ्वी का आकार गोल है और वह अपनी धुरी पर चक्कर लगाती है। आपने नक्षत्रों के परिभ्रमण का भी विवेचन किया है। आपने 'सूर्य सिद्धान्त' नामक ग्रन्थ में ग्रहण के कारणों का सूक्ष्म विवेचन करते हुए

ऐसा स्पष्ट रूप से प्रतिपादित किया है कि सूर्यग्रहण और चन्द्रग्रहण राहु और केतु नामक राक्षसों द्वारा ग्रसित होने से नहीं अपितु चन्द्रमा अथवा पृथ्वी की छाया का परिणाम हैं। आपने जो वर्षमान निश्चित किया है वह यूनानी ज्योतिषी टालमी द्वारा निश्चित किए हुए काल की अपेक्षा अधिक स्पष्ट है। आर्यभट्ट की गिनती के अनुसार वर्ष में 365.2586805 दिवस होते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि अन्य देशों के ज्योतिषियों की अपेक्षा आर्यभट्ट की गिनती आधुनिक कालगणना के साथ सर्वाधिक साम्य रखती है।

आर्यभट्ट का ज्योतिष-विज्ञान पर भी पूर्ण प्रभुत्व था। आप स्वयं भी एक विद्वान् ज्योतिषी थे। आपने ज्योतिष-गणित और अंकगणित का समन्वय किया। आपने गणित के ऐसे सूत्र दिए जिनसे त्रिकोण का क्षेत्रफल, वृत्त, गोल, शंकु, आदि के क्षेत्रफल सरलता से जाने जा सकते हैं।

आर्यभट्ट द्वारा किए गए समग्र शोध का वर्णन 1. आर्यभटीय, 2. दंशगीतिका, 3. तन्त्र आदि ग्रन्थों से मिलता है। महान् ज्योतिषी तथा गणितज्ञ आर्यभट्ट की प्रसिद्धि भारत में ही नहीं अपितु विदेशों में भी है।

आर्यभटीय चार पादों में बँटी है।

1. गीतिकापाद : इस में 10 श्लोक हैं जिसे लेखक दशगीतिक सूत्र कहता है।
2. गणितपाद : इसमें 33 श्लोक हैं। इसे बहुत महत्तवपूर्ण माना गया है। इसमें एक से लेकर अर्बुद तक परंपरागत अंक गिनाए गए हैं।
3. कालक्रियापाद : इस पाद में 23 श्लोकों में काल की इकाइयाँ गिनाई गई हैं। जैसे - वर्ष, मास, दिवस आदि।
4. गोलपाद : इस पाद में 50 श्लोक हैं। पहले श्लोक में सूर्य मार्ग में एक बिन्दू का निर्देश हैं जहाँ से मेष आदि का आरम्भ होता है। यह वसन्त विषुव रहा होगा।

क्या महात्मा गाँधी सहिष्णु थे?

-डॉ. विवेक आर्य

अमेरीकी राष्ट्रपति बराक ओबामा का यह बयान कि 'भारत में पिछले कुछ वर्षों में बढ़ती धार्मिक असहिष्णुता से गाँध ी जी आहत हुए होते' से कुछ तथाकथित बुद्धिजीवियों की जैसे लाटरी ही निकल गई हो। विस्मृत हो चुके गुजरात दंगों को अल्पसंख्यकों पर अत्याचार के नाम पर उछालने की कवायद फिर से तेज हो गई है मगर इस मानसिक कुश्ती में एक प्रश्न पर किसी का भी ध्यान नहीं गया कि क्या महात्मा गाँधी जी धार्मिक असहिष्णुता के प्रतीक हैं? 1947 के पश्चात् भारत में महात्मा गाँधी के चिंतन पर शंका करना अपने आपको कट्टरवादी, दक्षिणपंथी कहलाने जैसा बन गया है क्योंकि देशकी सत्ता अधिकतर उन लोगों के हाथों में रही जिनकी राजनैतिक सोच महात्मा गाँधी के विचारों का समर्थन करती थी। इस लेख का विषय महात्मा जी के विरुद्ध लेखन नहीं अपितु सत्य का ग्रहण और असत्य का त्याग है।

सत्यार्थप्रकाश के विषय में वीर सावरकर ने कहा था- 'महर्षि जी का लिखा अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश हिन्दू जाति की रगों में ऊष्ण रक्त का संचार करने वाला है। सत्यार्थप्रकाश की विद्यमानता में कोई विधर्मी अपने मजहब की शेखी नहीं मार सकता।'

महात्मा हंसराज ने कहा था - 'यह पुस्तक आर्यसमाज का सुदर्शन चक्र है जिसके प्रहारों के आगे मतवादियों का ठहरना बड़ा ही कठिन है।'

किसी ने सत्यार्थप्रकाश को चौदह बोर वाला पिस्तौल कहा तो अनेकों ने इसे पढ़कर आर्यसमाज के बनाये यज्ञकुण्ड में जीवन की आहुति डालकर देश और समाज की सेवा की परन्तु गाँधी जी के सत्यार्थप्रकाश के विषय में विचार पढ़िये- 'मेरे हृदय में स्वामी दयानंद के विषय में बड़ा मान है। मैं

समझता हूँ कि उन्होंने हिन्दू धर्म की बहुत सेवा की है, उनकी वीरता में संदेह करने की गुंजाइश नहीं, परन्तु उन्होंने धर्म को संकुचित बना दिया है। मैंने आर्य समाजियों की बाइबिल 'सत्यार्थप्रकाश' को पढ़ा है। मैंने इतने बड़े सुधारक का ऐसा निराशाजनक ग्रन्थ आज तक नहीं पढ़ा...। स्वामी दयानंद ने सत्य और केवल सत्य पर खड़े होने का दावा किया है परन्तु उन्होंने अनजाने में जैन धर्म, इस्लाम धर्म, ईसाइयत और स्वयं हिन्दू धर्म को अशुद्ध रूप में उपस्थित किया है। उन्होंने पृथ्वी तल पर अत्यंत सहिष्णु और स्वतंत्र सम्प्रदायों में से एक (हिन्दू सम्प्रदाय) को संकुचित बनाने का प्रयास किया है। यद्यपि वे मूर्ति-पूजा के विरुद्ध थे परन्तु उन्होंने वेदों को मूर्ति बना दिया और वेदों में विज्ञान प्रतिपादित प्रत्येक विद्या का होना प्रमाणित किया है। मेरी सम्मति में, आर्यसमाज 'सत्यार्थप्रकाश' की उत्तमताओं से उन्नत नहीं हो रहा है, अपितु उसकी उन्नति का कारण उसके संस्थापक का विशुद्ध चरित्र है। आप जहाँ कहीं भी आर्यसमाजियों को पायेंगे, वहाँ जीवन और जागृति मिलेगी, परन्तु संकुचित विचार और लड़ाई झगड़े की आदत से वे अन्य सम्प्रदाय वालों से लड़ते रहते हैं और जहाँ ऐसा नहीं वहाँ आपस में स्वयं लड़ते रहते हैं।'

सत्यार्थप्रकाश के प्रकाशन के पश्चात् भी मुसलमानों में कोई विशेष उत्तेजना नहीं फैली थी। परन्तु गाँधी जी के यंग इंडिया के उपरोक्त लेख से मुसलमानों ने आर्यसमाज के विरुद्ध उपद्रव आरम्भ कर दिया जिसके कारण महाशय राजपाल का बलिदान हुआ। कालांतर में सिंध में 1944 से सत्यार्थप्रकाश पर प्रतिबन्ध लगाने का प्रयास किया गया जिसके विरुद्ध महात्मा नारायण स्वामी जी ने आंदोलन कर कराची जाकर सार्वजनिक रूप से सत्यार्थ प्रकाश वितरण किया। महात्मा गाँधी ने इस विषय पर कहा कि 'सिंध सरकार ने अच्छा नहीं किया किन्तु मैं आर्यसमाजी भाइयों

से आग्रह करता हूँ कि वे चौदहवें समुल्लास में संशोधन कर दें।

अपने विचार रखने से पहले हम आर्य उपन्यासकार वैद्य गुरुदत्त जी द्वारा लिखित उपन्यास पत्रलता की कुछ पक्तियाँ यहाँ लिखते हैं-

'कठिनाई यह है कि आप सदैव ही व्यक्ति को व्यक्ति की ही दृष्टि से देखते हैं। समाज का अस्तित्व आपकी दृष्टि में है ही नहीं। इसी कारण आपकी और हमारी विचारधारा भिन्न-भिन्न दिशाओं में जाती है। किसी मृत व्यक्ति के कार्यों का ज्ञान इस कारण नहीं होता कि उससे उस व्यक्ति को लाभ अथवा हानि पहुँच सकती है। इसमें लाभ यह होता है कि समाज के सामूहिक आचार-विचार पर उस गुण-दोष-अन्वेषण का प्रभाव पड़ता है। मानव अपनी की गई भूलों को जानकर उससे बचता है और पहले किये गए उचित कामों के ज्ञान से, आगे उन्नत अवस्था तक पहुँचने का यत्न करता है।'

समीक्षा : जिस काल में सत्यार्थ प्रकाश लिखा गया उससे बहुत पहले, उस समय में भी और उसके पश्चात् भी देश मे भिन्न-भिन्न सम्प्रदाय राष्ट्र के चरित्र बल को निर्बल बना रहे हैं, अन्धविश्वास फैला रहे हैं, मानव को धर्म के नाम पर भटका रहे हैं, जिससे धर्म बदनाम हो रहा है। ऐसे में सत्यार्थप्रकाश के माध्यम से स्वामी जी ने मानव को दीर्घ काल तक ज्योति पाने का मार्ग दिखा दिया।

स्वामी दयानन्द जी के ही शब्दों में सत्यार्थप्रकाश की रचना का उद्देश्य धार्मिक सहिष्णुता का प्रतिपादन नहीं तो और क्या है? स्वामी जी लिखते हैं- "इन सब मतवादियों, इनके चेलों और अन्य सबको परस्पर सत्यासत्य के विचार करने में अधिक परिश्रम न हो इसलिए यह ग्रन्थ बनाया है, जो इसमें सत्य का मंडन और असत्य का खंडन किया है वह सबको बताना ही प्रयोजन समझा गया है। इसमें जैसी मेरी बुद्धि,

जितनी विद्या और जितना इन चारों मतों के मूल ग्रन्थ देखने से बोध हुआ है उसको सबके आगे निवेदन कर देना मैंने उत्तम समझा हैं क्योंकि विज्ञान गुप्त हुए का पुनः मिलना सहज नहीं है। पक्षपात छोड़कर इसको देखने से सत्यासत्य मत सबको विदित हो जायेगा। इस मेरे कर्म से यदि उपकार न माने तो विरोध भी न करें क्योंकि मेरा तात्पर्य किसी की हानि या विरोध करने में नहीं किन्तु सत्यासत्य का निर्णय कराने करने का है। इसी प्रकार सब मनुष्यों को न्याय की दृष्टि से सत्यासत्य का निर्णय कराना उचित है। मनुष्य का जन्म का होना सत्य असत्य का निर्णय करने कराने के लिए हैं। इसी मत मतान्तर के विवाद से जगत में जो-जो अनिष्ट फल हुए, होते हैं और होंगे उनको पक्षपात रहित विद्वत्जन जान सकते है। जब तक इस मनुष्य जाति में परस्पर मिथ्या मत-मतान्तर का विरुद्ध वाद न छुटेगा तब तक अन्याय न्याय का अंत न होगा। **सन्दर्भ**- सत्यार्थप्रकाश अनुभूमिका-1"

12वें समुल्लास की भूमिका में स्वामी दयानन्द जी लिखते हैं "इसमें जैनी लोगों को बुरा न मानना चाहिए क्योंकि जो-जो हमने इनके मत विषय में लिखा है वह केवल सत्यासत्य के निर्णयार्थ हैं न कि विरोध या हानि करने के अर्थ।

13वें समुल्लास की भूमिका में स्वामी दयानन्द जी लिखते हैं "यह लेख केवल सत्य की वृद्धि और असत्य के ह्रास होने के लिए लिखे हैं न कि किसी को दुःख देने व हानि करने व मिथ्या दोष लगाने के अर्थ।" संदर्भ अनुभूमिका-3'।

इन सन्दर्भों से यह सिद्ध होता है कि सत्यार्थप्रकाश की रचना का उद्देश्य सम्पूर्ण मानव जाति का कल्याण था, फिर क्या सत्यार्थप्रकाश को आर्यसमाजियों की बाइबिल लिखकर महात्मा गाँधी ने उसे संकीर्ण नहीं बना दिया?

जिस स्वामी दयानंद ने समाधि को ब्रह्मानन्द का त्यागकर अपने प्राणों की आहुति वैदिक धर्म के प्रचारार्थ एवं हिन्दू

जाति की महान सेवा में दी गई। उन पर हिन्दू धर्म को संकुचित करने का आरोप लगाकर महात्मा गाँधी अपने कौन से सिद्धांत को सार्वभौमिक सिद्ध करने का प्रयास कर रहे थे?

महात्मा गाँधी की प्रार्थना सभाओं में रामभजन के पश्चात गीता, गुरुग्रंथ साहिब एवं कुरान की आयतें भी होती थीं। सत्यार्थप्रकाश के 14वें समुल्लास में संशोधन करने की राय देने वाले गाँधी जी ने कुरान में उन आयतों का संशोधन करने की सलाह मुसलमानों को कभी नहीं दी जिनमें गैर मुसलमानों को काफिर और उनकी बहु-बेटियों को लूटने की बातें खुदा के नाम से लिखी गई हैं?

वेदों में विज्ञान पर टिप्पणी करने से पहले महात्मा गाँधी कभी इस्लाम में प्रचारित चमत्कारों जैसे उड़ने वाले बुराक गधे और चाँद के दो टुकड़े होने जैसी मान्यताओं पर कभी अविश्वास दिखाने की हिम्मत न कर सके। इतनी निर्भीकता गाँधी जी में नहीं थी।

भाई परमानन्द जब साउथ अफ्रीका गए तो महात्मा गाँधी जी से मिले थे। गाँधीजी ने भाई जी से कोई अप्रतिम उपहार देने का आग्रह किया। भाई जी ने गाँधी जी को सत्यार्थप्रकाश भेंट किया तो गाँधी जी ने कहा की ऐसी अनुपमकृति का लेखन एक आदित्य ब्रह्मचारी के द्वारा ही संभव है। उन्हीं महात्मा गाँधी के विचार कालांतर में परिवर्तित हो जाते हैं एवं वे मुसलमानों की नैतिक-अनैतिक सभी माँगों को मानते हुए इतना खो जाते थे कि उन्हें यह आभास भी नहीं हो पाता था कि वे कब सहिष्णु के बदले असहिष्णु विचारों का समर्थन कर रहे हैं।

अगर सत्य शब्दों में कोई मुझसे पूछेगा की आप आधुनिक इतिहास से किनके विचारों को सबसे अधिक सहिष्णु मानते हैं तो मेरा उत्तर एक ही होगा- 'मेरा देव दयालु दयानंद'

लालबहादुर शास्त्री
(जन्मदिवस पर विशेष)

–डॉ. श्याम सिंह 'शशि'

इतिहास में ऐसे अनेक महापुरुष हुए जो गरीबी में पैदा हुए, अभावों में पले और प्रतिकूल परिस्थितियों में भी प्रगति के पथ पर बढ़ते गए। गरीबी में पैदा होकर उन्नति के शिखर पर पहुँचने वालों में एक थे हमारे 'नन्हें' प्रधानमंत्री लालबहादुर शास्त्री। उनके पिता का देहान्त हो गया। उनकी माँ दो पुत्रियों और बालक लालबहादुर शास्त्री को लेकर अपने मायके मुगलसराय आ गईं। कुछ वर्ष बाद शास्त्री जी अपने मामा के साथ वाराणसी में रहने लगे। मामा ने उन्हें हरिश्चंद्र हाईस्कूल में भर्ती करा दिया। घर में गरीबी थी, पर शास्त्री जी मेधावी छात्र थे। स्वभाव से विनम्र और मेहनती बालक जल्दी ही अध्यापकों के प्रिय बन गए। 16 वर्ष की अवस्था में वे असहयोग आन्दोलन में कूद पड़े और गिरफ्तार हो गए, किन्तु छोटे होने के कारण पुलिस ने उन्हें छोड़ दिया। मेधावी छात्र ने फिर श्रम करना शुरू किया। कहते हैं, कई बार उन्हें स्कूल जाने के लिए मीलों पैदल चलना पड़ता था तथा गंगा भी तैरकर पार करनी पड़ती थी। शास्त्री की परीक्षा में वे प्रथम आए थे। तभी से शास्त्री जी सत्याग्रह और आन्दोलनों में भाग लेने लगे तथा सजाएँ काटने लगे। परिवार की हालत खराब होती चली गई, क्योंकि शास्त्रीजी के अतिरिक्त परिवार में अन्य कमाने वाला कोई नहीं था। एक बार वे जेल में थे। घर में उनकी पत्नी, पुत्री और माँ थीं। पुत्री बहुत बीमार हो गई। घर में पैसा नहीं था। पुत्री के लिए दवा कहाँ से आती? हालत और खराब होती चली गई। शास्त्री जी को तार दिया गया। वे पैरोल पर रिहा कर दिए गए। घर पहुँचे तो देखते हैं, बच्ची दम तोड़ चुकी है। उन्होंने उसका दाहसंस्कार किया और पैरोल की अवधि पूरी होने पर फिर जेल वापस चले गए। कष्टों को झेलता हुआ यही व्यक्ति भारत का आदर्श प्रधानमंत्री बना। शास्त्रीजी के व्यक्तित्व में मृदुता और दृढ़ता सदा बनी रही। काम छोटा हो या बड़ा लगन के साथ पूरा करते थे। गुरु नानक का यह दोहा वे प्रायः गुनगुनाया करते थे।

"नानक नन्हें ही रहो जैसे नन्हीं दूब।
और वृख सूख जाएँगे दूब खूब ही खूब।।"

अपनी मुक्ति की चिन्ता क्यों करूँ?

–शिवकुमार गोयल

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने अपना जीवन वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार व अन्धविश्वास तथा दुर्व्यसनों के निवारण के अभियान के लिए समर्पित किया हुआ था। वे जगह-जगह पहुँचकर लोगों को कुरीतियों व दुर्व्यसनों से मुक्त होने की प्रेरणा दिया करते थे। कई बार उन्होंने कुछ राजाओं को भोग-विलास त्यागकर प्रजा के हित में लगे रहने के राजधर्म का उपदेश देकर उन्हें अपने कर्तव्यपालन में लगाया था। एक बार स्वामी जी फर्रुखाबाद में थे। गंगा के किनारे एक झोंपड़ी में रहकर योगसाधना में लीन थे। उनके वयोवृद्ध साधु-मित्र स्वामी कैलाश आश्रम को पता चला कि स्वामी दयानन्द यहाँ रुके हुए हैं, वे उनसे मिलने जा पहुँचे। उन्हें किसी ने बताया था कि स्वामी जी भोग विलास के लिए कई राजाओं को हड़काकर अपनी निर्भीकता का परिचय दे चुके हैं। उन्होंने स्वामी जी से कहा 'दयानन्द' मैं समय-समय पर यह सुनता रहता हूँ कि तुम अपने! प्रवचनों में कुरीतियों पर कड़े प्रहार करते हो। ब्रिटिश शासन को विदेशी बताकर उसकी भी निन्दा करते हो। इतना तप व योग साधना करने के बाद भी अपनी मुक्ति की जगह औरों की चिन्ता में क्यों पड़े हो? स्वामी दयानन्द ने कहा कैलाश जी मैं केवल अपनी मुक्ति के लिये संन्यासी नहीं बना हूँ। मैं सत्य का प्रचार करता रहूँगा-जिससे समाज अन्धविश्वासों से मुक्ति पा सके, कोई नाराज होता है तो मुझे क्यों चिन्ता? स्वामी कैलाश आश्रम दयानन्द जी की परोपकार की भावना को देखकर नतमस्तक हो उठे।

कागज़ी रावण जलाने मात्र से सीताओं के सम्मान की रक्षा नहीं होगी

–लक्ष्मी कांता चावला

विजया दशमी रावण पर श्री रामचन्द्र की विजय का स्मृति दिवस है। युगों–युगों से भारतवासी इस दिन को गौरव और उल्लास से मनाते हैं। राम सत्य, न्याय एवं सच्चरित्रता के प्रतीक हैं, पर रावण अत्याचार, अनाचार एवं अन्याय का। राम साक्षात् ब्रह्म–जिन्होंने इस धरती को निशिचरहीन करने का भुजा उठा कर संकल्प किया था। अनादिकाल से भारतवासियों का आदर्श भारत–पुत्र राम ही रहा है, रावण नहीं। आज भी भारत के जन–गण के मन में पुत्र, भाई, पति और राजा के रूप में राम की ही चाह है। कुशासन एवं दुःशासन के पराकाष्ठा काल में भी राम राज्य की स्वर्णिम कल्पना ही हमें आनन्द प्रदान करती है।

रावण का चरित्र व राज्य : आज भी रावण को जलाकर 'राम की जय' का नाद ही गूँजता है पर रावण ही जलता है, जलाने वाले राम नहीं है। निष्पक्ष विवेचन से यह ज्ञात होता है कि आज का समाज चारित्रिक पतन की जिस सीमा तक पहुँच गया है, उसकी तुलना में तो रावण का चरित्र बहुत ऊँचा था।

भारत में अनेक कवियों ने विविध भांति एवं विभिन्न भाषाओं में राम का गुणगान किया है परन्तु महर्षि वाल्मीकि तथा गोस्वामी तुलसीदास विशेष रूप से प्रसिद्ध हैं। बाल्मीकि जी ने राम को 'मर्यादा पुरुषोत्तम' के रूप में चित्रित किया है जब कि तुलसी दास के राम साक्षात् ब्रह्म हैं, जो भक्त हित मानव के रूप में अवतरित हुए हैं। इन दोनों ही कवियों ने रावण के चरित्र एवं राज्य का विशद वर्णन किया

है। सशक्त शासक और शिव भक्त रावण वेदों का महान पंडित था। जब हनुमान जी सीता की खोज में लंका में जाते हैं, तब वाल्मीकि जी लिखते हैं:

शुश्राव जपतां तत्र गृहेषु वै।
स्वाध्याय निरतांश्च यातुधानान्ददर्श सः।।

अर्थात् उन राक्षस घरों में हनुमान जी ने यत्र-तत्र वेद मंत्रों का पाठ करते हुए राक्षसों की ध्वनि सुनी तथा वेद के स्वाध्याय में निरत राक्षसों को भी देखा।

निर्धनता का अभिशाप लंका में नहीं था। अनावृष्टि, अतिवृष्टि, अकाल आदि का भय तक न था। सभी देवता रावण के वश में थे अथवा यह कहिए कि सभी प्राकृतिक साधन रावण ने अपने वश में कर रखे थे।

रावण का अपराध सीता-हरण- ऐसे शासक रावण का सबसे बड़ा अपराध सीता-हरण रहा। यद्यपि आदि कवि के अनुसार यह राजनीतिक संघर्ष का परिणाम था और तुलसी की भक्ति भावना ने इसे रावण की मोक्षेच्छा से भी जोड़ दिया है। खरदूषण सहित चौदह सहस्र सैनिकों का मारा जाना रावण के लिए चुनौती थी और नाक-कान कटी शूर्पणखा का रावण के समक्ष रोना-चिल्लाना उसके भ्रातृत्व, पौरुष एवं शासन की परीक्षा थी। अकम्पन के परामर्श से रावण ने सीधी टक्कर का मार्ग त्याग कर कपटी मृग का आश्रय लिया और सीता हरण द्वारा राम की शक्ति को ललकारा। तुलसी के राम ने अरण्यकांड में कहा-

अनुज वधू भगिनी सुत नारी, सुनु सठ, कन्या सम ए चारी।
इनहिं कुदृष्टि बिलोकहिं जोई, ताहि वधे कछु पाप न होई।।

भाव यह है कि एक महिला का अपहरण करने से रावण

वध हुआ। 'मातृवत् परदारेषु' की संस्कृत में पालित-पोषित रामचन्द्र जी की दृष्टि में बाली का मुख्य अपराध भी भाई की पत्नी से दुर्व्यवहार ही था।

पवनपुत्र हनुमान जी लंका में प्रवेश कर सीता जी की खोज में अन्तःपुर में सोई हुई स्त्रियों को देखते हैं। वाल्मीकि जी के अनुसार यद्यपि उनका उद्देश्य सीता जी को ढूँढना था तथापि वह भी मन से दुःखी हुए क्योंकि उन्होंने नारी को इस अवस्था में देखा जो कि अधर्म का कार्य है।

रावण का सीता से व्यवहार : अब इसी के दूसरे पक्ष पर विचार करें। रावण ने सीता का अपहरण अवश्य किया, पर उसने मान-सम्मान में कहीं भी आँच न आने दी। राक्षस महिलाओं को सीता का प्रहरी नियुक्त किया गया था। डरा-धमकाकर सीता को रावण के अनुकूल बनाने का प्रयास भी महिलाएँ ही करती थीं। त्रिजटा उनकी वरिष्ठ अधिकारी थी। सीता रावण को धिक्कारती है, फटकारती है, तब भी रावण कठोर शब्दों में उसे मरवा देने की धमकी देकर चला जाता है, शारीरिक बल का प्रयोग नहीं करता। इस स्थिति के विपरीत आज हमारे देश में अपहरण ही नहीं, बलात्कार भी होते हैं। आठ मास की बालिका से लेकर अस्सी वर्षीय वृद्धा तक इस जघन्य अपराध का शिकार हो चुकी हैं। जो लोग अपहरण और बलात्कार के कुकृत्यों को अपने समाज में घटित होते देख-सुन कर आराम से सो और खा सकते हैं वे किस मुँह से रावण को जलाते हैं, रावण से आँखें मिलाने का साहस उन्हें कैसे होगा? एक सीता के अपहरण के अपराधी रावण को मर्यादा पुरुषोत्तम राम ने वंश सहित मिट्टी में मिला दिया, सोने की लंका राख

कर दी किन्तु आज पुलिस स्टेशनों, शिक्षण संस्थानों, सरकारी और गैर-सरकारी संस्थानों में नारी की इज्जत लूटी जाती है, बलात्कार ही नहीं, सामूहिक बलात्कार भी होते हैं किन्तु कोई भी राम-पुत्र इस अनाचार के विरुद्ध संघर्ष के लिए आगे नहीं आता। कागजी रावण को जलाने मात्र से ही सीताओं के सम्मान की रक्षा न हो सकेगी। जबकि असली रावण धन एवं सत्ता के बल से समाज पर छाए रहते हैं। वैसे आज इन दुराचारियों को रावण कहना भी रावण का अपमान और दुष्टों का सम्मान है।

ध्यान देने योग्य सत्य यह है कि रावण द्वारा सीता हरण जैसे कुकृत्य की निन्दा उसके सभी बंधु-बांधवों ने की। सर्वप्रथम मारीच ने ही कहा- हे रावण! संसार में परस्त्री-गमन से बड़ा और कोई पातक नहीं। अतः आप अपनी स्त्रियों से ही प्रीति करें और अपने कुल की रक्षा करें। रावण बंधु विभीषण ने भी उसे सन्मार्ग पर लाने का प्रयास किया, चाहे इसके लिए उसे अपमानित और निष्कासित भी होना पड़ा।

रावण के सचिव माल्यवंत ने भी अपने सम्राट् को समझाया और अन्त में यह कहा भी कि रावण का पाप उसके राज्य, परिवार और राक्षस वंश का नाश करने वाला होगा। रावणपत्नी मन्दोदरी ने भी रावण को सीता को वापस भेजने के लिए कहा-

सुनहु नाथ सीता बिनु दीन्हे।
हित न तुम्हार संभु अज कीन्हे।।

ऐसे अनेक उदाहरणों से स्पष्ट है कि राक्षस राज रावण के सभी इष्ट-मित्रों ने सीता के हरण का दृढ़ता से विरोध करते हुए उसे गलत रास्ता छोड़ने की प्रेरणा दी थी, पर आज

शक्तिशाली वर्ग के ऐसे दुष्कृत्यों का मुखर विरोध करने का साहस हमारे समाज में- जो रावण के बुत को ढोल बजा कर जलाता है- नाममात्र ही बचा है।

यह कटु सत्य है कि दशहरा स्थल पर अधिकतर लोग परिवार की महिलाओं को साथ ले जाना पसंद नहीं करते। कारण यह है कि उस भीड़ भरे वातावरण में अनेक लोग महिलाओं को धक्के मारने और भद्दे शब्द कहने के लिए खड़े रहते हैं। रावण जलाने वाले समाज को यह अभद्र व्यवहार शोभा नहीं देता।

इस विकट स्थिति से निराश होना तो उचित नहीं, परन्तु यह सोचना तो होगा कि क्या हमारे हाथ इतने साफ हैं कि हम रावण को जला सकें? जिस देश की असंख्य लड़कियाँ आज रोटी के टुकड़ों के लिए, नौकरी पाने की मृगतृष्णा में शरीर बेचने पर विवश हैं अथवा कुचक्रों का शिकार हो जिन्दा माँस की मार्किट में सिसक-तड़प रही है, जहाँ की कुछ बेटियाँ अरब की मंडियों में भेड़-बकरी की तरह बिकने को विवश हैं, उस देश के राम-पुत्रों को पहले इन जिन्दा रावणों को जलाना होगा। रावण जलाइए, अवश्य जलाइए पर अनाचार, अत्याचार, दुराचार एवं भ्रष्टाचार के रावण को भी दहन करना है और रामत्व को मन-आत्मा में धारण किए बिना यह कार्य सम्पन्न नहीं होगा। आइए, यह संकल्प हम सभी करें कि रावण जलाने से पूर्व हमें राम भी बनना है।

अमृतसर, पंजाब

ॐ

दीपावली पर स्वयं बुझकर एक नया दीप जला गए

-डॉ. रामभक्त लांगायन, (आई. ए. एस.)

भारत ऋषि मुनियों की भूमि रही है। स्वामी दयानन्द भी इस धरा पर पैदा हुए, जो अपनी अद्वितीय बुद्धि और ज्ञान के कारण इस कलियुग में भी ऋषि के नाम से विख्यात हुए। उनके जन्म के समय देश अंग्रेजों का गुलाम था, मूर्तिपूजा जोरों पर थी, नारी को घृणा की दृष्टि से देखा जाता था, छुआछूत का बोलबाला था तथा देश अनेक अन्धविश्वासों से ग्रस्त था। स्वामी दयानन्द ने सभी बुराइयों को जड़ से उखाड़ने का प्रयत्न किया। किसी कवि ने उनके बारे में ठीक कहा है- **गिने जाएँ मुमकिन है सैरा के जर्रे, समुद्र के कतरे फलक के सितारे। दयानन्द स्वामी; मगर तेरे अहसाँ, न गिनती में आएँ, कभी हमसे सारे।।**

स्वामी दयानन्द का जन्म गुजरात प्रांत के टंकारा गाँव में फाल्गुन बदी दशमी सम्वत् 1881, तदनुसार 12 फरवरी सन् 1825 में हुआ। पिता का नाम कर्षनजी तिवारी था। दयानन्द का बचपन का नाम मूलशंकर था। वह कभी स्कूल नहीं गये। पिता और पंडितों की देखरेख में ही संस्कृत और धर्मशास्त्रों का अध्ययन किया। व्याकरण भी पढ़ा। उनके पिता शिवभक्त थे। हर वर्ष शिवरात्रि के दिन उपवास रखते थे तथा रात्रि-जागरण करते थे। चौदह साल की उम्र तक दयानन्द ने वेदों के कुछ अंश कण्ठस्थ कर लिये थे। तभी मूलशंकर के पिता ने शिवरात्रि के दिन उन्हें सारी रात जागने को तथा उपवास करने को कहा। मूलशंकर रात भर जागते रहे। रात्रि बारह बजे के बाद एक-के-बाद-एक सभी सो गये। मूलशंकर अकेले जागते रहे। उसी समय एक चूहा आया और शिवलिंग पर घूमने लगा और मिठाई खाने लगा। मूलशंकर के मन में

आया जब ये शिव अपनी रक्षा नहीं कर सकते तो भला ये और किसी की रक्षा क्या करेंगे? यह भाव बार-बार उनके मन में आता रहा और सोचा कि यह वास्तविक शिव नहीं है। वास्तविक शिव और कहीं है जिसे जानना जरूरी है। दयानन्द को विवेक हो गया। जिस प्रकार गुरुनानक को अनाज तौलते हुए 13 वर्ष की संख्या ने ज्ञान दिया, विवाह-संस्कार कराते समय पुरोहित के सावधान हो जा कहने ने रामदास को समर्थ रामदास बना दिया, ठीक इसी प्रकार सच्चे शिव को जानने की इच्छा ने दयानन्द के दिल में वैराग्य की भावना पैदा कर दी और वे इस पर दिन-रात सोचते रहे।

कुछ दिन बाद उनकी छोटी बहन हैजे से अचानक चल बसी। घर में कोलाहल मच गया। सभी रो रहे थे लेकिन मूल शंकर की आँख में आँसू नहीं आए। उनका दिल पत्थर का बन गया। मन में विचार आया कि मुझे भी ऐसे ही मरना होगा। मृत्यु से कैसे छुटकारा पाया जा सकता है? इसके 3 वर्ष बाद उनके चाचा की मृत्यु हो गई। वे अपने चाचा से बहुत प्यार करते थे। वे बहुत रोए। वैराग्य बढ़ता गया। उनकी ऐसी हालत देख पिता ने उनको विवाह-पाश में बाँधना चाहा। विवाह की पूरी तैयारी हो गई। लेकिन दयानन्द ने अपने मित्रों को साफ-साफ कह दिया कि मैं विवाह नहीं करना चाहता और 21 साल की उम्र में वह एक रात घर छोड़ बाहर निकल गये और फिर कभी नहीं आये।

मूलशंकर ज्ञान की खोज में दूर-दूर तक गए। महात्माओं और साधु सन्तों से मिले। वह श्रृंगेरी मठ, द्वारिका, ऋषिकेश, टिहरी तथा हिमालय पर्वत के दुर्गम स्थानों पर भी गए। जहाँ गंगा का स्रोत है, वहाँ भी गए। यौगिक क्रियाएँ सीखीं। स्वामी पूर्णानन्द सरस्वती के पास भी कुछ दिन रहे। वह विद्वान् महात्मा थे। उन्होंने मूलशंकर को संन्यास दिलाया तथा उन का नाम दयानन्द सरस्वती रखा। वह लगातार 14 वर्ष तक घूमते

रहे, लेकिन उनकी जिज्ञासा शांत नहीं हुई। हिमालय पर्वत पर पहुँचकर उनकी इच्छा देहत्याग की हुई लेकिन विचार आया कि यह ठीक नहीं है, सच्चे शिव को खोजकर ही देह त्याग करूँगा। उनका 1846-1860 तक का भ्रमण खट्टे-मीठे अनुभवों से भरा है। उन्होंने देखा कि अपने आपको साधु-महात्मा कहने वाले भी अनेक बुराइयों से ग्रस्त हैं। माँस-मदिरा का सेवन करते हैं। इससे उन्हें बड़ी ठेस पहुँची।

36 साल की उम्र में घूमते-घूमते वे 1860 में गुरु विरजानन्द के पास पहुँचे। वे मथुरा में रहते थे। उस समय उनकी आयु 71 वर्ष थी। वे केवल आर्ष ग्रन्थ ही पढ़ाते थे। स्वामी दयानन्द के पास उस समय जो व्याकरण आदि की पुस्तकें थीं, वे यमुना में फिंकवा दीं। स्वामी जी को खाने-पीने व पुस्तकों के व्यय के लिए मथुरावासी अमरनाथ जोशी ने मदद की। दयानन्द साधारण विद्यार्थी नहीं थे। एक बार पढ़ाने पर ही उन्हें याद हो जाता था। वहाँ उन्होंने न केवल व्याकरण पढ़ा बल्कि तीन वर्ष के अल्पकाल में अन्य बहुत कुछ भी अध्ययन किया। शिक्षा उपरांत जब दयानन्द, पाठशाला से जाने लगे तो दक्षिणा रूप में उन्होंने कुछ लौंग गुरु चरणों में रखे, लेकिन गुरु विरजानन्द ने कहा 'दयानन्द'! मुझे तुमसे लौंग नहीं चाहिए।' दयानन्द बोले आदेश दीजिए गुरुदेव।' गुरु विरजानन्द ने कहा मैं तुम्हारे जीवन की दक्षिणा चाहता हूँ। प्रतिज्ञा करो कि आर्यावर्त में आर्ष ग्रन्थों की महिमा की स्थापना करोगे और वैदिक धर्म की स्थापना में अपने प्राण तक अर्पित कर दोगे। उस क्षण चरण छूकर दयानन्द ने गुरु का आदेश शिरोधार्य किया और जीवनभर उसी का पालन करते रहे। यह मई 1863 की घटना है वे आगरा पहुँचे और 2 वर्ष वहाँ रहे। कुछ शंकाएँ थीं। गुरु जी के पास आकर उनका समाधान किया और इसके बाद उन्होंने देश का भ्रमण शुरू कर दिया। जगह-जगह प्रवचन किए। उत्तरप्रदेश, हरियाणा, पंजाब, राजस्थान

में ज्यादा घूमे। मुम्बई भी गए। गुजरात गए। पूर्वी भारत का भी भ्रमण किया। उस समय के सभी विद्वानों, महत्माओं से मिले और ज्ञान-चर्चा की।

स्वामी दयानन्द ने निराकार परमेश्वर को माना। मूर्तिपूजा का खण्डन किया। 1891 में वे काशी पहुँचे। वहाँ पण्डितों से मूर्तिपूजा पर शास्त्रार्थ हुआ। इसके अलावा कई जगह शास्त्रार्थ हुए। सब जगह स्वामी जी की जीत हुई। वे कलकत्ता में देवेन्द्रनाथ ठाकुर, केशवचन्द्र सेन, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर आदि से मिले। वे संस्कृत बोलते थे। अपनी विद्वत्ता से सबको मोह लेते थे। इसके बाद उन्होंने हिन्दी भाषा में बोलना शुरू किया। भ्रमण करते-करते वे 1874 में मुम्बई पहुँचे, फिर अहमदाबाद गए। वे 1875 में फिर मुम्बई गए। यहाँ उन्होंने गिरगाँव रोड़ पर डॉ. माणिक जी की बागवाड़ी में आर्यसमाज की स्थापना की। उस दिन चैत्र शुक्ला प्रतिपदा और सम्वत् 1875 तदनुसार 7 अप्रैल थी। पहले आर्यसमाज के 28 नियम थे। 1877 में लाहौर में आर्यसमाज की स्थापना की। 1875 में ही सत्यार्थप्रकाश का प्रथम बार प्रकाशन हुआ। यह ग्रन्थ धार्मिक दृष्टि से बाईबिल का स्थान रखता है। इसमें वेदों का सार है और लगभग सभी विषयों पर चर्चा की गई है।

वास्तव में आर्यसमाज की स्थापना करके स्वामी दयानन्द ने एक नए आन्दोलन की शुरुआत की। जगह-जगह आर्यसमाजों की स्थापना की गई। स्वामी जी का कहना था कि वेद को सबको पढ़ने-पढ़ाने का अधिकार है। स्त्री और शूद्र भी वेद पढ़ सकते हैं। स्त्री शिक्षा पर स्वामी दयानन्द ने जोर दिया। उन्होंने नियोग का प्रतिपादन करते हुए विधवा-विवाह की प्रथा को सहमति दी। वह वर्णाश्रम के पक्षधर थे, लेकिन जातपाँत के विरुद्ध थे। उन्होंने ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका लिखी तथा वेदों का भी आर्ष पद्धति के अनुसार भाष्य किया। उनका भाष्य सायण, महीधर आदि के भाष्य से भिन्न था। वे वेदों में हिंसा

नहीं मानते थे। गोमाता का सम्मान करते थे और उन्होंने रेवाड़ी में प्रथम गोशाला और फिरोजपुर में सर्वप्रथम एक अनाथालय की स्थापना की। वे वेद के अनुसार शिक्षा पद्धति चलाना चाहते थे और उन्हीं से प्रेरणा पाकर उनके परम शिष्य स्वामी श्रद्धानन्द ने पहला गुरुकुल कांगड़ी (हरिद्वार) में खोला। उनका विचार था कि लड़कों और लड़कियों को अलग-अलग शिक्षा देनी चाहिए।

वे हिन्दू धर्म में आई हुई कुरीतियों के खिलाफ थे। उनका मन्तव्य था कि वेद में मूर्तिपूजा का कोई स्थान नहीं है। परमात्मा एक है और वह कभी अवतार नहीं लेता। ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि उसी एक के असंख्य नाम हैं। वैसे इन नामों वाले हमारे महाशय, पूर्वज, विद्वान् भी हुए हैं। अंध विश्वासों का उन्होंने घोर विरोध किया। वेदों को ही स्वतः प्रमाण माना, पुराण आदि को नहीं। उन्होंने सदाचार और चरित्र पर बल दिया। सारा जीवन घूम-घूमकर वैदिक सिद्धान्तों को जन-जन तक फैलाने में लगा दिया। वह सत्य बोलते थे, निडर थे और असत्य को असत्य कहने से डरते नहीं थे। इससे कुछ लोग उनके शत्रु भी बन गए। यही कारण था कि उन्हें अनेक बार जहर दिया गया। उन्होंने अनेक राजा-महाराजाओं के दरबार में सत्संग किया और बहुत से लोग उनके शिष्य बन गए। महाराणा उदयपुर को मनुस्मृति और दर्शनों का अध्ययन कराया। 31 मई 1883 को जोधपुर के राजा के निमंत्रण पर वह जोधपुर पधारे। उन्हें सदाचार तथा शारीरिक व्यायाम की शिक्षा दी, लेकिन वहीं कुछ विधर्मी मतों के प्रचारकों ने पाचक के द्वारा उन्हें जहर दिला दिया। जब स्वामी दयानन्द को पता लगा कि उन्हें जहर दे दिया है, तो अपनी करुणा भावना को प्रदर्शित करते हुए उन्होंने उस पाचक को कुछ रुपये देकर वहाँ से भगा दिया, ताकि उस पर मुकद्दमा न चले। उनकी हालत बिगड़ने लगी। उन्हें अजमेर ले जाया गया। वहाँ लगभग एक

मास वे मृत्यु से जूझते रहे। उनके पास सेवा के लिए गुरुदत्त विद्यार्थी भी रहे, जो लाहौर से आये थे। सन् 1883 दीपावली के दिन वह गायत्री मंत्र आदि का उच्चारण करते हुए समाधिस्थ हो गए और फिर मधुर स्वर में बोले, "हे दयामय, हे सर्वशक्तिमान्, तेरी यही इच्छा है। तेरी इच्छा पूर्ण हो। तूने अच्छी लीला की' और 'ओ३म्' का उच्चारण करते हुए प्राणों को त्याग दिया। गुरुदत्त ने उस समय दिव्य शक्ति के दर्शन किए। जिस व्यक्ति की अंग्रेजी साहित्य व साईंस पढ़कर यह विचारधारा बन गई थी कि 'गॉड इज नो व्हेयर', उसे स्वामी दयानन्द को मृत्यु के समय भी आनन्द की मुद्रा में देखकर मानना पड़ा कि 'गॉड इज़ नाऊ हियर' अर्थात् अब परमात्मा यहाँ है। गुरुदत्त ने स्वामी जी के काम को आगे बढ़ाया। वास्तव में वह दीपावली के दिन स्वयं बुझकर अनेक नये दीपक जला गए।

ऋषि दयानन्द ने अपना सम्पूर्ण जीवन वैदिक धर्म के उद्धार तथा मानवता के हित-चिंतन में लगा दिया। उन्होंने कोई आश्रम नहीं बनाया और न कोई शिष्य, न व्यक्तिपूजा की और न मूर्तिपूजा। आर्यसमाज के दस नियम बनाकर अपना सारा सन्देश दुनिया को दे दिया। स्वामी दयानन्द एक विद्वान् ही नहीं, भारतीय एकता तथा देश की आजादी के संस्थापक भी थे। देश की एकता के लिए उन्होंने हिन्दी भाषा का सहारा लिया। उन्होंने कितने ही देशभक्तों को प्रेरित किया। लाला लाजपतराय, भाई परमानन्द, सरदार भगतसिंह, महात्मा हंसराज, पंडित लेखराम, स्वामी श्रद्धानंद आदि कितने ही आर्यवीरों ने भारत माता की वेदी पर आहुति दे दी। वास्तव में वे महान् विद्वान्, समाज-सुधारक, सच्चे देशभक्त और ब्रह्मचर्य की अप्रतिम मूर्ति थे, जो भारतीय इतिहास में सदैव अमर रहेंगे।

दो आर्य विद्वानों के संस्मरण

–श्री त. शि. क. कण्णन

1. पं. बुद्धदेव विद्यालंकार

स्व. पण्डित बुद्धदेव जी विद्यालंकार (स्वामी समर्पणानन्द जी) जैसे मूर्धन्य विद्वान् आर्यसमाज की अमूल्य निधि रहे हैं। एक बार नवम्बर के अन्तिम सप्ताह में वे मुझसे मिलने तिरुच्ची आ गये। मूसलाधार वर्षा, आंधी, तूफान, सारा तमिलनाडु बाढ़ में डूबा, यातायात ठप्प। सामान के नाम पर एक झोला, हाथ में एक थैला, किताबों से भरा हुआ।

बोले, "देखो कण्णन मैं तुमसे मिलना चाहता था, कामायनी में वर्णित जलप्रलय को देखना चाहता था (कुछ वर्ष पूर्व ही भयंकर वर्षा के कारण धनुषकोटि द्वीप भी रामेश्वरम् शहर से अलग हो ध्वस्त हो गया था, कट गया था) लोगों से पता चला कि तमिलनाडु का इस समय का मौसम मेरी कामना के अनुरूप है। फिर पुत्र : तुम यहाँ हो मुझे किस बात की कमी है। देखो, यह प्रदेश भी भारत की गरिमा में डूबा कुछ अलग सा। क्या जमकर वर्षा हो रही है। मैंने हँसते हुए कहा कि आपने ही तो पंक्तियाँ लिखी थीं, "मैया बरस बरस रसवारी"। बुरी तरह फँस गया था। भाषा की समस्या! आप लोग भी क्या खाते हो, काफी, इमली मिर्च और चावल। दूध, घी, दही दूर।"

खाने पीने के बाद कहने लगे, "कुछ आर्य बन्धुओं से मिलवा दो।"

पण्डित जी यहाँ तिरुच्ची में और आर्य समाज "एकः चन्द्रः तमो हन्ति" के अनुसार इस शहर का मैं ही आर्य सेवक हूँ। पण्डित जी का चेहरा अवसाद से आछन्न हो गया। अरे भाई, यहाँ एक समाज तो बनवा देते।"

मैंने अगले दिन एक होटल में स्थानीय क्लब में उनका भाषण करवाया। भाषण से पूर्व पण्डित की मस्त बहार चाल एवं वेशभूषा को देख दो एक तथाकथित धनी पुरुषों ने परस्पर कहा आज तो क्लब में मनोविनोद का समय रहेगा। यह बेचारा न जाने क्या बोलेगा।"

पण्डित जी ने "वेदों में शासन पद्धति" विषय पर अंग्रेजी में लगभग डेढ़ घण्टे तक गर्जना की। सभा में उपस्थित नगर

प्रमुख जिलाधीश (बाद में तमिलनाडु के मुख्य सचिव) उनके भाषण से इतना ज्यादा प्रभावित हुए कि मेरा हृदय गद्‌गद् हो गया। किसी को जरा भी आशा नहीं थी कि उन्होंने लच्छेदार अंग्रेजी में संस्कृत के इतने श्लोकों एवं मन्त्रों के उद्धरण दिए कि लोग हतप्रभ रह गये। क्या वाणी है? क्या विद्वत्ता है, विषय प्रस्तुतीकरण में कैसी अद्‌भुत शक्ति है? लोग झूम उठे, वाह क्या भाषण था। यह था आर्यपुत्र की विद्वता का एक अनुकरणीय उदाहरण।

शहर की संस्कृत परिषद् में उनका संस्कृत में भाषण हुआ। सौन्दर्य लहरी के अनुरूप उन्होंने गंगा लहरी के श्लोक सुनाये। धाराप्रवाह संस्कृत में उनके भाषण से गुरुकुल शिक्षा की गरिमा, द्विगुणित हुई। स्थानीय ब्राह्मण वर्ग ने उन्हें कन्धों पर उठा लिया। कावेरी नदी के किनारे बैठे उन्होंने दर्जनों श्लोकों की रचना कर डाली।

विदाई लेते समय कहने लगे, "कण्णन कुछ ऐसा करना कि गुरुकुल माता का नाम ऊँचा रहे।" शायद पूज्य पण्डित जी की भविष्यवाणी थी या आशीर्वाद। दो वर्ष पूर्व तमिलनाडु सरकार ने राज्य का सर्वोच्च साहित्यिक पुरस्कार मुझे प्रदान किया। तमिल व हिन्दी के संवर्धन के लिए।

2. प्रकाशवीर शास्त्री

सन् 1965 मार्च में हिन्दी आन्दोलन तमिलनाडु में समाप्त हो गया था। पर हिन्दी के प्रति जनता में रोष था। हिन्दी नेताओं के प्रति ज्यादा क्रोध था।

स्व. प्रकाशवीर जी शास्त्री पाण्डिचेरी आये थे। वहाँ से मुझसे मिलने सीधे तिरुच्ची आ गये। मैंने पूछा शास्त्री जी कैसे आना हुआ–कहने लगे "कण्णन मैं यहाँ के हिन्दी विरोधी नेताओं से मिलकर उनकी राय जानना चाहता हूँ। तमिलनाडु में हिन्दी विरोध हमारे घर से ही प्रारंभ हुआ था। मेरे श्वसुर डाक्टर की.आ.पे. विश्वनाथम् तमिल के धुरन्धर विद्वान्, हिन्दी विरोध ी, कट्टर नेता। हिन्दी विरोधी आन्दोलन के सूत्रधार। मैंने कहा "शास्त्री जी ये लोग आपसे मिलना तो दूर, कहीं वाद-विवाद, फिर झगड़ न पड़ें। आप इस हृदय परिर्वतन, मंथन के प्रयत्न को छोड़ दें तो ठीक होगा"

"भई तुम क्या कहते हो, यदि हमने यह प्रयास नहीं किया तो कौन करेगा, ये नेता.....।

पर वह आर्यपुत्र नहीं माना। पहले मैंने अपने श्वसुर महोदय से मिलवाया। पूज्य शास्त्री जी ने इतनी शालीनता से भेंट की। शास्त्री जी की विलक्षण व्यवहार पटुता से श्री विश्वनाथम् जी विचलित हो गये और वे स्वयं श्री शास्त्री जी को द्रविड कषगम ने नेता रामस्वामी नायकर पेरियार जी से मिलाने ले गये। यह एक मधुर मिलन था। पेरियार महोदय ने कहा कि हमने हिन्दी भाषा का कभी भी विरोध नहीं किया है। आपकी रीति, लड़ाई की नीति से हम नाराज़ हैं। नायकर जी ने कहा मैंने ही अपने घर में हिन्दी का प्रचार प्रारंभ किया था। पर आप लोगों ने हमें कभी भी समय नहीं दिया और एक जबरदस्ती का रुख अपनाया। आप लोगों की सूखी प्रवृत्ति से हिन्दी ने जोड़ने का नहीं तोड़ने का कार्यक्रम बना दिया। शाम को तमिल संगम में श्री शास्त्री की हिन्दी विरोधी नेताओं से वार्तालाप भेंट हुई। शास्त्री जी संस्कृत परिषद् में भी पधारे और मधु सा मधुर भाषण संस्कृत भाषा में दिया। अपनी इस यात्रा के बारे में श्री शास्त्री जी ने धर्मयुग में एक लेख भी लिखा था और भाषागत विवाद को सुलझाने में श्री शास्त्री जी का प्रमुख हाथ रहा है।

रात की गाड़ी से वे चेन्नै रवाना हो गये। कण्णन जरा देरी हो गई, हम लोगों (हिन्दी नेताओं) को बहुत पहले ही यहाँ आकर स्थानीय लोगों की भावना का सम्मान करते हुए अपनी स्थिति स्पष्ट करनी थी। यह एक भूल हो गई। अन्यथा यह अनावश्यक भाषा विवाद इस शिक्षित प्रदेश से कभी भी नहीं उभरता। दिल्ली वापस जाकर श्री शास्त्री जी ने तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री को जब इस भेंट से परिचित कराया तो स्वयं माननीय प्रधानमंत्री जी का मुझे एक पत्र मिला था। श्री शास्त्री जी ऐसे व्यवहार कुशल थे। श्री प्रकाशवीर जी शास्त्री को किसी ने तमिलनाडु जाने के लिये नहीं कहा था-जहाँ भाषागत दंगा उग्ररूप धारण कर चुका था। पर यह शास्त्री जी की दूरदर्शिता थी कि वह स्वयं अकेले आये। निर्भीक महर्षि दयानन्द सरस्वती का यह सरस्वती-पुत्र भी तो निर्भीक था।

ORIGINAL HOME OF THE ARYANS

-N.K.Chowdhry

The original home of the Aryans is historically a matter of great controversy. There have been a number of researches of scholars from time to time, but there does not exist any unanimity in opinion.

The most important theory that continues to be taught in school text books all over India is that the Aryans originally lived in central Asia.

Max Mueller, in his "Lectures on the Science of Languages"points out that the Indians, Greeks, Persians, Romans and the Germans must have at some time lived together. The Pitri and Matri in Sanskrit are the same as Pidar and Madar in Persian, Father and Mother in English and Patar and Matar in Latin. These are fundamental words of every day use in families. They are not trade terms. The commonality suggests that the ancestors of these people must have at some time lived at some common place.

Before we critically examine Max Mueller's theory let us have a look at some other theories.

A very interesting opinion came from Bal Gangadhar Tilak. According to his book, "The Arctic Home of the Aryans"he was of the opinion that the original home of the Aryans was the Arctic region. The Vedas refer to days and nights lasting for six months which are to be found only in the Arctic region. The theory may seem strange to the modern mind but geologists have proved that in prehistoric times this region had a congenial climate. There is no conclusive evidence to suggest that Aryan civilization existed even as early as the pre-historic times and as such not much credence is given to this theory.

Another theory to which no serious thought has been given by the historians is that the original home of the Aryans was the Sapt-Sindhu the basin of the rivers Jhelum , Chenab , Ravi , Beas , Sutlej , Saraswati and Indus . The theory is discounted since it mentions the most improbable that the land of Saptsindhu was completely cut off from southern India being separated by a sea. Waves of Aryans migration advanced to the west including Europe.

During a visit to Germany, my attention was attracted to a road sign which read 'Eine Vahan '(One Way Traffic). The German Airlines is Lufthansa. (Akash ka Hansa). Vahan and Hansa are Sanskrit words. Adolph Hitler had Swastika as his sign. These similarities do suggest

some links between India and Germany. German scholars have proposed that Germany is the original home of the Aryans. The view is rejected on the grounds that in the prehistoric times and long after that the country was covered with forests.

Those who are for the Central Asia theory maintain that migrants took two different routes. While one traveled East the other traveled West.

That is why there are some common words or signs.

The Indian origin theorists maintain that this happened as some migrants may have moved out from India to Europe and Iran. Fire worship is common to India and Iran for that one reason. The herb Som is popular in Afghanistan as a sedative . (The weak link in this theory is that why would any group migrate from fertile regions to less hospitable places.)

There are convincing arguments to reinforce the theory that Aryans were natives of India and not migrants.

Max Mueller's theory of Aryans as migrants from Central Asia is weak on a number of points

It is most improbable that a superior civilization such as that of the Aryans could have been cradled in one of the most barren tracts of land in Asia. It is beyond imaginations that immigrants from Central Asia where food was scarce entered India through the passes chanting Vedic hymns.

Immigrants , when they go out and settle in any foreign land , invariably carry with them their cultural traditions, their original language , their festivals and their modes of worship . A number of cities in Canada where people from India have settled in large numbers have Restaurant sign boards in Gurumukhi. Sikh citizens of Britain send out their Marriage invitations cards printed in Gurumukhi.

Dewali is celebrated by the Indian settlers in Surinam while the settlers in Mauritius continue worshipping the Banana tree.

We have of Chutney Music Bands from the Caribbean islands and players like Ramdhan from West Indies. There are Bhandarnaiks in Sri Lanka and Sukarno in Indonesia. All these examples establish that the present day population of these foreign countries had their ancestors coming from India. On the other hand, as on today, we do not have in India any custom or festival that may even remotely be connected to those prevalent in Central Asia.

Let us now have a look at literature. The Mughal invaders came from the North Western regions . Urdu, the language that evolved post their arrival in India, has mention of flora and fauna that relates not to India but Persia and Arabia. Urdu poetry talks about the Bulbul (and not the not Koel). Gule lala and not the lotus is the simile in Urdu poetry.

Sanskrit literature does not mention any bird or flower that grows in Central Asia. There is absolutely no mention of any fauna or flora that grows outside the geographical limits of ancient India. In case the Aryans were immigrants from Central Asia, their literature must have contained the birds, the flowers and the cultural traditions of their original mother land

The Vedas were composed in India. The modern structure of India society and religious beliefs is directly traceable to the Vedic institutions Neither in the Vedas nor in other Sanskrit literature do we find any tradition that refers to the immigration of the Aryans into India from outside . The word Arya means persons of good family (elite). It would be illogical to associate it with immigration.

The world today has shrunk to the level of a global village. Indians are migrating and settling in a number of foreign countries all over the world. A few thousand years hence, Indian immigrants settled in other parts of the world would probably be doing similar research to explore whether they had their roots in India or were original residents of the country their ancestors chose to settle.

C2A/211 Janakpuri

Brahmasha India Vedic Research Foundation acknowledges with thanks receipt of Rs. 1000/- from Shri J. C. Gupta, 9/15 Kalkaji Extn. New Delhi-110019.

Donation to the Foundation are eligible for Tax Exemption under section 80G of the Incom Tax Act 1960 vide No. DIT(E)1/3313/DELBE 21670-2503210 dated 25.03.2010.

Date of Pubn. : 30.9.2015 Posted at - NIE - H.O. Postal Date : 2-3 Oct. 2015
RNI Reg. No. DELBIL/2007/22062 Postal Regd. No. DL(W) 10/2143/2014-2016

मयीदमिन्द्र इंद्रियं दधात्वस्मान् रायो मघवानः सचन्ताम्।
अस्माकं सन्त्वाशिषः सत्वा नः सन्त्वाशिषः।। (यजु.2/10)

ऋषिः - परमेष्ठी प्रजापतिः, देवता-इन्द्रः,
छन्द-भुरिग्ब्राह्मीपंक्तिः

(इन्द्र) हे परमेश्वर! मुझमें (इदं) इन प्रत्यक्ष उपलब्ध (इन्द्रियं) सुख और ज्ञान की साधनभूत इंद्रियों को (दधातु) धारण कराइए (मधवानः) परमधनी आप (अस्मान् रायः सचन्ताम्) हमें शीघ्र ही सभी प्रकार की समृद्धि प्राप्त कराएँ। इस प्रकार हमारी सारी कामनाएँ पूर्ण हों और हमारी (आाशिषः) न्याय-युक्त इच्छाओं के पूर्ण होने से हम परमानन्द प्राप्त करें।

Oh Almightly God! You are 'Indra' the Master of all power and possessions. Kindly endow us with knowledge and creative vigour of senses. Be gracious. So that all riches of the world may accrue to us. Oh Bestower of all wishes may our desires come out to be true, by Your grace, thus may we enjoy supreme bliss of Your company here and hereafter.

Printed by - Friendsprintofast, New Delhi-58